

## जीवन का रहस्य



जब महावीर ने शैशवावस्था को पार कर युवा-वस्था में प्रवेश किया, तो उनके हृदय में रात-दिन यह प्रश्न उठने लगा, कि— 'जीवन का रहस्य' क्या है ? खाते-पीते, चलते-फिरते, जागते-सोते, हर घड़ी और हर पल—यही प्रश्न उठा करता— कि 'जीवन का रहस्य' क्या है ?

वासना बोली— 'भोग'

वृष्णा ने कहा— 'राज्य'

हृदय ने उत्तर दिया— 'प्रेम'

आत्मा बोल उठी— 'त्याग—कर्तव्य पालन'

+ + +

महावीर विचारने लगे—यदि जीवन का रहस्य 'भोग' माना जाय, तब तो सचमुच नर-भव जैसे अमूल्य चिन्ता-मणि रत्न को कागलों के उड़ाने के लिये समुद्र में फेंकना है; क्योंकि ये भोग प्रत्यक्ष में ही विषधर भुजंग से दिखाई दे रहे हैं। इनको ज्यों-ज्यों सेवन किया जाता है, त्यों-त्यों ही ये वासना रूप विष को बढ़ाते ही चले जाते हैं। यदि इतने से ही 'वस' होता तो भी कोई बात नहीं थी। पर इनकी प्राप्ति भी तो स्वाधीन नहीं है, कर्माधीन है। कर्मभूमि के विधाता ऋषभदेव जैसे महा-पुरुषों को भी संयम और तप की रक्षा के लिये ६ मास तक आहार भी प्राप्त न हो सका, तो साधारण पुरुषों की बात ही क्या है ? इतना ही क्यों, ये भोग प्राप्त होकर के भी आखिर एक दिन

विछुड़ने ही वाले हैं—सान्त हैं। इन्द्र अहमिन्द्र जैसे असंख्यात वर्ष तक भोगों में मस्त रहने वाले भी तो एक दिन इनकी सान्तता देख कर ही विकल हो उठते हैं—और सोचने लगते हैं कि कब हम नर-भव पाकर अपने 'ध्येय' को प्राप्त करें। अरे ! और की मैं क्या कह रहा हूँ, अभी-अभी इस भव के पूर्व ही तो मैं ने असंख्य वर्ष तक स्वर्गीय सुखों का-भोगों का उपभोग किया, फिर भी मुझे तृप्ति नहीं हुई—शान्ति नहीं मिली। इतना ही नहीं, अनेकों कष्ट उठाने के बाद एक बार भोग—इन्द्रिय सुख प्राप्त होता है; बाद फिर वही दुःखों का समा-योग। और ये ही अनन्त कर्म-बंधके मूल कारण हैं—विनाश की जड़ हैं। तब ऐसे कर्माधीन, सान्त, दुःख-विनिश्चित और पाप के बीज स्वरूप भोगों को कैसे 'जीवन का रहस्य' माना जा सकता है ? स्त्री ही भोगों की आगार, खानि या जननी मानी जाती है। जब इन भोगों का ऐसा स्वरूप है, तब इनकी जननी का क्या रूप होगा ? उसका सम्पर्क कितना विधम; कितना विघातक न होगा ? मुझे इस जन्म में जीवन के रहस्य की खोज करना है, स्त्री—परिग्रह इसके विपरीत है, अतएव इस जन्म में मेरे स्त्री-संग का सर्वथा परित्याग है।

+ + +

तो क्या 'राज्य' 'जीवन का रहस्य' हो सकता है ? नहीं-नहीं, राज्य भी जीवन का रहस्य नहीं समझ पड़ता। क्योंकि लड़ाई की जड़ तीन 'जमीन जोरू और जर।' सो राज्य में इन तीनों का ही समावेश है। जमीन को लड़ाई की पहली जड़



कहा है, सो बिलकुल यथार्थ है—मनुष्य एक एक अंगुल जमीन के लिये खून की नदियां बहा देते हैं भाई-भाई का सिर काटने को तैयार खड़ा रहता है। ओफ, ऐसे अनर्थों की परम्परा वाला राज्य भी कहीं 'जीवन का रहस्य' माना जा सकता है ? यदि सचमुच 'राज्य' जीवन में शान्तिका देने वाला होता, तो क्यों बाहुबली भरत-चक्री पर विजयलाम करके भी उस समस्त वसुधा के राज्य को तिलाञ्जलि देकर वन को जाते। प्रथम तो इस राज्य की प्राप्ति में ही अनन्त दुःख है, फिर उसके रक्षण में उससे भी अनन्त गुणा दुःख है। इतना सब कष्ट सहने के बाद भी तो वह स्थायी नहीं है—एक दिन अवश्य विनष्ट होने वाला है। ओफ, इसका वियोग तो नरक निगोद की अनन्त यातनाओं से भी बढ़ कर होता है और जब तक इसका संयोग रहता है—अनन्त संताप अहर्निश बना ही रहता है तब यही मानने में आता है, कि राज्य भी 'जीवन का रहस्य' नहीं है। और क्या मैं ने पूर्व के अनन्त जन्मों में अगणित बार राज्य सुख नहीं भोगे हैं ? क्या मैं असंख्य बार बड़े-बड़े साम्राज्यों का महाप्रभु नहीं बना हूँ ? फिर जब उनसे शान्ति नहीं मिली तो आज की इस अल्पायु में और क्षुद्र राज्य-प्राप्ति में मुझे कौनसा जीवन का रहस्य उपलब्ध हो सकता है ? कोई भी नहीं। इस लिये मैं इस जन्म में 'राज्य-सुख' का भी त्याग करता हूँ।

+ + +

तो क्या 'प्रेम' को ही जीवन का रहस्य समझूँ ? प्रेम शब्द 'प्रीञ्' धातु से बना है। जिसका अर्थ होता है—तर्पण करना, तृप्त करना। परन्तु संसार

में तो मुझे ऐसा कोई उपाय नहीं दिखता, जिससे कि समस्त प्राणियों को तृप्त किया जा सके ? इसके मुख्य दो कारण हैं—एक तो यह कि, प्रत्येक प्राणी की इच्छाएं भिन्न भिन्न हैं। जो काम एक को सन्तुष्ट करन वाला हो सकता है, वही—दूसरे को विद्वेष या विद्रोह का भी कारण हो सकता है, इस लिये जब हम एक के साथ प्रेम करेंगे, अर्थात्—उसे तृप्त करने का प्रयत्न करेंगे, तभी दूसरा नाराज हो जायगा और वही द्वेष उपस्थित हो जायगा। इस प्रकार से यह 'प्रेम' राग-द्वेष का पूरा अष्टा दिखाई देता है।

दूसरे—हमारी ऐसी शक्ति नहीं, कि हम किसी भी वस्तु के स्वरूप को बदल सकें। ऐसी दशा में यही सिद्ध होता है कि प्रेम भी राग-द्वेष की जड़ है। जहां राग द्वेष है, वहां अशांति का साम्राज्य समझना चाहिये। जहां अशांति है, वहां क्या 'जीवन का रहस्य' प्राप्त हो सकता है ? कुछ भी नहीं ? देखो ना, राम ने सीता के प्रेम से और पांडवों ने द्रौपदी के प्रेम से ही रामायण और महा-भारत मचाया, पर क्या इससे उन्हें शान्ति मिल सकी ? आखिर राम को भी तो अपने कर्तव्य के पालनार्थ प्रेम को जलाञ्जलि देकर सीता का परि-त्याग करना पड़ा और पांडवों को दंडित होना पड़ा। इस लिये यही निष्कर्ष निकलता है कि प्रेम भी जीवन का रहस्य नहीं है।

+ + +

अन्त में 'कर्तव्य-पालन' बचता है, जो कि आत्मा की पुकार है। मेरी आत्मा मुझे इस बात के लिये प्रेरित कर रही है कि यदि जीवन का कुछ



रहस्य है तो कर्तव्यपालन में ही है। लेकिन जितने भी व्यवहारिक कर्तव्य देखने में आते हैं—वे सब प्रवृत्ति रूप हैं। और जहां तक भी प्रवृत्ति की परम्परा देखता हूं, वहां तक मुझे रागद्वेष के अंश स्पष्ट दिखलाई दे रहे हैं। इस लिये रागद्वेष की कारणभूत प्रवृत्ति का पालन तो कर्तव्य मार्ग हो नहीं सकता। यदि आज जगत में होने वाले अन्याय, दुराचार, घोर हिंसा आदि के विरुद्ध मैं अपनी आवाज़ बुलन्द कर किसी भी प्रवृत्ति मार्ग का आश्रय लेकर रोकने की चेष्टा करूंगा। तो अवश्य ही अनर्थ परम्परा खड़ी हो जायगी। अतएव संसार में फैले हुये इन अत्याचारों को रोकने के लिये मुझे निवृत्ति मार्ग को ही पकड़ना श्रेयस्कर होगा। पहिले मुझे त्याग का पाठ सीखना पड़ेगा, क्योंकि बिना त्याग के 'कर्तव्य पालन' हो नहीं सकता। यदि राम सीता का बिना त्याग किये ही किसी प्रवृत्ति मार्ग से 'जनापवाद' रोकने की चेष्टा करते तो शायद आज संसार में राम का नाम इतने आदर के साथ न लिया जाता और 'अपवाद' की उत्तरोत्तर पूर्वा ही होती। किन्तु निवृत्ति रूप त्याग मार्ग का आश्रय लेने से वह तात्कालिक जनापवाद भी धुल गया और कर्तव्यपालन करने से उनका नाम भी

अमर हो गया।

+ + +

वस, कर्तव्यपालन करने के लिये त्यागके भागवान महावीर में उत्तरोत्तर बढ़ते ही गए, और अन्त में एक दिन वह आ उपस्थित हुआ—जो भागवान महावीर सारी सांसारिक वासनाओं, विषय भोगों, बड़े बड़े प्रलोभनों और राज्य आदि को त्याग तिलाञ्जलि देकर कर्तव्य पालन के लिये त्याग परम आधार और जगत के कल्याणकर निवृत्ति मार्ग में कूद पड़े। पूरे १२ वर्ष तक त्याग के उच्च से उच्च श्रेणियों पर चल अपने को त्याग के खरी से खरी आंच में तपाया और भावों की पविधारा से अपने को उज्वल किया। जिसका स यह निकला कि वे अकेले ही सारे भूमण्डल फैले हुए दुराचार, अन्याय और महाहिंसाओं को रोकने में सफल हो सके।

आज भागवान महावीर का नाम विद्वत्समाज जिस श्रद्धा और भक्ति के साथ लिया जाता है, किसी से अप्रकट नहीं है वास्तव में जीवन रहस्य 'त्याग' ही है।

—हीरालाल जैन

